NEERAJ®

M.H.D. - 19

हिन्दी दलित साहित्य का विकास

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Vaishali Gupta*

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 300/-

Content

हिन्दी दलित साहित्य का विकास

Question Paper—June-2024 (Solved) 1-2
Question Paper—December-2023 (Solved) 1-2
Question Paper—June-2023 (Solved) 1-3
Question Paper—December-2022 (Solved) 1-3
Question Paper—Exam Held in February-2021 (Solved) 1-3
Question Paper—December, 2019 (Solved) 1-3
Question Paper—June, 2019 (Solved) 1-3
Question Paper—December, 2018 (Solved) 1-3
Question Paper—June, 2018 (Solved) 1-3

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

हिन्दी दलित कविता

1. समकालीन दलित कविता का विकास 1

2. 'घृणा तुम्हें मार सकती है' और 'सच यही है' 8
जाति व्यवस्था को बदलने का संकल्प

3. 'तब तुम्हारी निष्ठा क्या होती?' और 'चुनौती' : 15
समता की सृजनात्मक पहल

4. 'जनपथ' और 'अभिलाषा' प्रतिरोध के मुखर स्वर 22

5. 'सुनो ब्राह्मण' और 'विद्रोहिणी' : विषमतावादी मूल्यों से विद्रोह 29

6. 'आज का रैदास' और 'द्रोणाचार्य सुनें : उनकी परंपराएं सुनें' 37
विद्रोह की परंपरा का सृजनात्मक विकास

हिन्दी दलित कहानी–I

7. दलित कहानी की विशिष्टता, कथावस्तु : सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकार 44

8. 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' : ओमप्रकाश वाल्मीकि 52

9. 'आवाजें' : मोहनदास नैमिशराय 58

10. 'आमने-सामने' : विपिन बिहारी 64

11. 'परिवर्तन की बात' : सूरजपाल चौहान 70

हिन्दी दलित कहानी–II

12. 'लटकी हुई शर्त' : प्रह्लादचंद्र दास 75

13. 'वैतरणी' : नीरा परमार 80

14. 'सुमंगली' : कावेरी 86

15. 'अंगारा' : डॉ. कुसुम मेघवाल 92

हिन्दी दलित आत्मकथन

16. दलित आत्मकथा की विशेषता : 'सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के दस्तावेज' 97

17. 'जूठन' : आत्मानुभूति की मर्मांतक अनुभूति 109

18. 'जूठन' : अवमानना और बहिष्कार के दंश 122

19. अपने-अपने पिंजरे-1 135

20. अपने-अपने पिंजरे-2 144

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2024

(Solved)

हिन्दी दलित साहित्य का विकास

M.H.D.-19

समय : 2 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 50*

नोट : *कुल चार प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रथम प्रश्न अनिवार्य है। शेष में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए।*

प्रश्न 1. निम्नलिखित पद्यांशों में से किसी एक की सप्रसंग व्याख्या कीजिए–

(क) हम आदमी भी हैं
और हत्यारे भी।
पहले लाशें बिछाते हैं
फिर राजनीति करते हैं।
क्योंकि लाशें बिछाना
और लाशों की राजनीति करना
दोनों ही हमारी नियति बन चुकी हैं।
सच सही है।

उत्तर–प्रसंग–प्रस्तुत पंक्तियाँ मोहनदास नैमिशराय की कविता 'सच यही है' से ली गई हैं। वैसे तो दलित साहित्य दलित उत्पीड़न और शोषण की कहानी दर्शाता है, किंतु नैमिशराय की यह कविता साम्प्रदायिकता पर केन्द्रित है। उनका मानना है कि साम्प्रदायिकता के सबसे अधिक शिकार स्त्री और दलित ही होते हैं, क्योंकि दंगा कराने वालों की पहुँच इन तक आसान होती है। मोहनदास नैमिशराय प्रसिद्ध दलित साहित्यकारों में से एक है। 'सच यही है' कविता में नैमिशराय जी ने साम्प्रदायिकता की समस्या पर प्रकाश डाला है। साम्प्रदायिकता उस समाज का एक रोग है, जिस समाज का हिस्सा दलित भी है। साम्प्रदायिकता एक ऐसा रोग है, जिसमें बेकसूर लोग बलि चढ़ते हैं। इन पंक्तियों में राजनेताओं द्वारा सांप्रदायिक हिंसा करवाने और उसका राजनीतिक लाभ उठाने का वर्णन है।

व्याख्या–यहाँ कवि ने हम शब्द का प्रयोग राजनेताओं के लिए किया है। राजनेता इंसान के रूप में हत्यारे हैं। वे पहले लोगों की धार्मिक भावनाओं को भड़काकर हिंसा करवाते हैं। इस हिंसा में निर्दोष लोग मारे जाते हैं। बाद में राजनेता हमदर्दी कर झूठा नाटक करके मरने वाले लोगों पर राजनीति करते हैं। हिंसा करवाना और उस पर राजनीति करना आज की राजनीति का कटु सत्य है और कवि ने इसी सत्य को उजागर किया है।

विशेष–1. खड़ी बोली है।
2. मुक्तक छंद है।
3. राजनीति की घिनौनी तस्वीर पेश की है।
4. आत्मकथात्मक शैली है।

(ख) घृणा तुम्हें मार सकती है
तोड़ सकती है
पर अपने ही दायरे में
जिन्दा नहीं रख सकती
ताजा हवा देकर
और, नहीं सुना सकती
प्रेम कविता
मौसम के रंगीन पंखों पर बैठाकर!

उत्तर–प्रसंग–'घृणा तुम्हें मार सकती है' ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा रचित कविता है। इस कविता के माध्यम से कवि ने समाज में व्याप्त वर्ण-व्यवस्था पर प्रहार किया है। इस वर्ण-व्यवस्था ने दलित वर्ग की आत्मा को छलनी कर दिया और उच्च वर्ग ने उनकी इस पीड़ा, वेदना को शायद कभी नहीं समझा। ओमप्रकाश जी ने समाज में रह रहे संपन्न लोगों का ध्यान उस ओर खींचा हैं। वे कविता के माध्यम से बताना चाहते हैं कि जब बिना किसी अपराध के समाज में किसी एक वर्ग को वंचित रखा जाता है, अपमानित किया जाता है, उसका शोषण किया जाता है, तो उस पर क्या बीतती है। धर्म के नाम पर समाज में ऐसी व्यवस्था निर्मित करने का किसी को अधिकार नहीं है।

व्याख्या–दलित जो वर्षों से शोषण का शिकार रहे हैं, अब उनमें आत्मबोध जाग चुका है। आज वे अपने अधिकार के लिए आवाज उठाकर लड़ने का साहस रखते हैं। कवि ने अपनी कविता की आगे की पंक्तियों में वर्ण-व्यवस्था को रेतीला ढूह कहा है, जो एक दिन टूटकर रहेगा। उन्होंने कहा है कि जिस दिन 'वर्ण-व्यवस्था' भारतीय समाज से समाप्त हो जाएगी, उस दिन यहाँ सवर्ण और दलित के घर की रोटी का अंतर भी खत्म हो जाएगा और वे लोग भी नहीं रहेंगे, जो इस अंतर को पैदा करते हैं। प्रेमचंद ने जिस

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

राष्ट्रीयता का स्वप्न देखा है, वह राष्ट्रीयता आ जाएगी। प्रेमचंद ने सदैव समतावादी समाज का स्वप्न देखा था। वाल्मीकि की यह कविता 'घृणा तुम्हें मार सकती है' में कवि ने स्पष्ट किया है कि दलित और सर्वहारा वर्ग की रोटी के मायने भिन्न होते हैं। दलित अपनी मेहनत से रोटी का जुगाड़ करता है। वर्णवादी और पूंजीवादी शोषकों की नजर उनकी रोटी पर रहती है, किंतु दलित वर्ग अपने अधिकार को, अपनी रोटी को बचाकर रखना चाहता है। वे बताना चाहते हैं कि यह अंतर सिर्फ तुम्हारी सोच और निगाह का है, इसे बदलना जरूरी है, तभी यह सदियों की पीड़ा समाप्त हो पाएगी। कवि ने अपनी कविता में आगे भय की बात की है कि यह जो कुछ भय है, समाज में फैली इस वर्ण-व्यवस्था का, जो बिना किसी कसूर के ही व्यक्तियों का सब-कुछ छीन लेता है। वर्ण श्रेष्ठता से प्राप्त भौतिक सुखों के छिन जाने का डर भी है।

कवि ने उन लोगों पर विशेषत: आघात किया है, जो स्वयं को आधुनिक कहते हैं, कवि कहता है कि उनमें सच सुनने का साहस है, क्योंकि जो समाज दिखता है, वह उसकी सच्चाई नहीं है, इसके पीछे छिपी सच्चाई बहुत कड़वी है। कवि का कहना है कि यदि एक लोकतांत्रिक और आधुनिक समाज में मनुष्यता का भार कम और जाति व्यवस्था का ज्यादा है, ऐसे में आधुनिक बनने का ढोंग करना बेकार है।

विशेष–1. कविता छंदमुक्त तथा भीतरी लयात्मकता से युक्त है। 2. अर्थपूर्ण कथ्य का प्रयोग किया गया है, जो दलित जीवन की यथार्थ पीड़ा को उजागर करती है।

प्रश्न 2. 'जनपथ' कविता की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-4, पृष्ठ-25, प्रश्न 1

प्रश्न 3. दलित कहानी की विशेषताओं को उद्घाटित कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-7, पृष्ठ-46, 'दलित कहानी की विशिष्टता'

प्रश्न 4. 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' कहानी की तात्विक समीक्षा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-8, पृष्ठ-54, 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ : हस्तक्षेप के विविध आयाम'

प्रश्न 5. 'वैतरणी' कहानी में अभिव्यक्त दलित चेतना को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-13, पृष्ठ-81, 'वैतरणी में दलित समाज की पीड़ा'

प्रश्न 6. दलित कहानी के सौंदर्यशास्त्रीय प्रतिमानों को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-12, पृष्ठ-75, 'दलित कहानी का सौंदर्यशास्त्र'

प्रश्न 7. 'अपने-अपने पिंजरे' का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-20, पृष्ठ-140, प्रश्न 1

प्रश्न 8. हिंदी साहित्य में आत्मकथन की परंपरा का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-20, पृष्ठ-142, प्रश्न 4

■■

NEERAJ PUBLICATIONS
www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

हिन्दी दलित साहित्य का विकास

हिन्दी दलित कविता

समकालीन दलित कविता का विकास

1

परिचय

दलितों ने समाज में कदम-कदम पर अपमान, घृणा और वर्ण संबंधी त्रासदी को झेला है। दलित साहित्यकारों ने दलितों की दर्दभरी व्यथा को अपने साहित्य के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया है। दलित साहित्य का मूल उद्देश्य है–अपने साहित्य के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाना। वे अपनी सार्थक अभिव्यक्ति के द्वारा परिवर्तनकारी चेतना का विकास करना चाहते हैं तथा समाज में व्याप्त अन्याय, शोषण, असमानता तथा अमानवीय व्यवहार को समूल नष्ट करना चाहते हैं। वे दलितों के हृदय में दबे दर्द को कविता के माध्यम से व्यक्त करना चाहते हैं। दलित आत्मकथाएं रचनाकारों के अपने दुखभरे अनुभव रहे हैं, जिन्हें उन्होंने साहित्य रूप में सभी के समक्ष प्रस्तुत किया है। दलित कवि परंपरागत बेड़ियों को तोड़कर नये समाज के निर्माण के लिए संघर्ष करते रहे हैं। पिछले लगभग 30-40 वर्षों में दलित रचनाकारों की एक पीढ़ी तैयार हुई है, जो अपने समाज की पीड़ा व दर्द को व्यक्त करती आ रही है।

अध्याय का विहंगावलोकन

समकालीन दलित कविता का विकास

आजादी के पश्चात भारत एक जनतांत्रिक गणराज्य बना, जिसमें संविधान के अनुसार छुआछूत, लिंग, वंश, धर्म, जाति, भाषा के आधार पर सभी नागरिकों को समान अधिकार दिये गए, किंतु आजादी के इतने समय के बाद भी ये बुराइयाँ समाज में अभी भी विद्यमान हैं। हालांकि छुआछूत या जाति के आधार पर भेदभाव किये जाने पर, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम, 1989 के अंतर्गत दण्ड का प्रावधान है। डॉ. भीमराव अंबेडकर, जो संविधान निर्माण समिति के अध्यक्ष तथा स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री थे, उनका यह बड़ा स्वप्न था कि देश में समतावादी व्यवस्था कायम हो सके। हजारों वर्षों से चली आ रही छुआछूत की प्रथा को जड़ से खत्म करने के लिए संविधान में इसके विरुद्ध प्रावधान रखे गए हैं, किंतु फिर भी समाज में विषमता व्याप्त है। इससे केवल मनुष्य के सम्मान, पहचान या गरिमा का अवमूल्य नहीं होता, बल्कि इससे मनुष्य को राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा शैक्षिक क्षेत्र में भी तिरस्कृत और बहिष्कृत किया जाता है। धर्म तथा जाति के आधार पर समाज के एक बड़े वर्ग के कारण श्रमजीवी वर्ग मुख्यधारा से बहिष्कृत ही रहता है। खुलेआम इनके मानवाधिकारों का उल्लंघन किया जाता है। आज भी दलित हमारे समाज में प्रताड़ित होते हैं। उनका शोषण किया जाता है, उन पर अत्याचार किये जाते हैं। संविधान में स्वतंत्रता तथा समानता का प्रावधान होने के बावजूद भी दलित समाज को जातिगत आधार पर परंपरागत व्यवसाय करने की मजबूरी से आजादी नहीं मिली है। आज भी सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक स्थानों पर उनका प्रवेश वर्जित है। उत्पादन के क्षेत्र में वे केवल बंधुआ मजदूर बनकर ही रह गए हैं। यही कारण है कि दलित आर्थिक रूप से पिछड़े, उपेक्षित व वंचित रहते हैं। आजादी के बाद देश का तो विकास हुआ, किंतु दलित वर्ग इस विकास से वंचित ही रहा। उनकी बस्तियों में बुनियादी सुविधाएं भी नहीं पहुँच पातीं।

नीरा परमार की कहानी 'वैतरणी' के अनुसार भेदभाव की पीड़ादायी परंपरा जो आज भी चली आ रही है, का खुलासा करती है। उन्होंने कहानी के माध्यम से बताया है कि किस प्रकार सवर्ण जाति के लोग समाज में अपना अधिकार बनाए रखते हैं, जिसके कारण दलित लोगों को स्वच्छ पीने का पानी तक नहीं मिल पाता। आज वर्तमान युग में भी जाति की अहंकारी सोच का बोलबाला है, जो राजनीतिक भ्रष्टाचार को भी जन्म देती है। डॉ. अंबेडकर ने जाति-व्यवस्था की अमानवीयता को अपनी किताब 'जातिभेद के उच्छेद' में प्रस्तुत किया है। चातुर्वर्ण्य की इस अधम व्यवस्था के कारण तथाकथित निम्न वर्ग अपना विकास करने में असफल रहा। उन्हें न तो शिक्षा पाने का अधिकार था और न ही अपने लिए कोई मुक्ति का मार्ग पाने का कोई साधन था, जिसके कारण वे शोषण के शिकार बनते रहे। वर्ण-जाति व्यवस्था का इतिहास तीन हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। इस व्यवस्था ने दलितों को बहिष्कृत बस्तियों में रहने के लिए बाध्य किया। भारत में जाति के नाम पर इस प्रकार के भेदभाव ने यहाँ की स्वाधीनता पर प्रश्नचिह्न लगा दिया है।

www.neerajbooks.com

डॉ. बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर ने 20 दिसम्बर, 1927 को छुआछूत के विरुद्ध एक विशाल आंदोलन किया, जिसमें हजारों की संख्या में दलित स्त्री-पुरुषों ने उसमें भाग लेकर उनका साथ दिया। इसके पश्चात 25 दिसंबर, 1927 को अस्पृश्यता का विरोध करने के लिए हिंदू धर्मग्रन्थ मनस्मृति को जला दिया गया। सनातनी धर्मावलंबियों ने हिंसात्मक हमलों द्वारा दलितों के संघर्ष को रोकने के बहुत प्रयास किये, किंतु दलित अपनी बरसों से पड़ी बेड़ियों को तोड़ने के लिए सजग हो चुके थे और उन्होंने स्वयं को सामाजिक दासता से आजाद कराने के सामाजिक-सांस्कृतिक प्रयासों को जारी रखा।

दलित साहित्य आंदोलन की पृष्ठभूमि

परंपरा और स्वरूप

डॉ. अम्बेडकर ने शिक्षा के महत्त्व को समझते हुए 1945 में मुंबई (बम्बई) में पीपुल्स एज्युकेशन सोसाइटी स्थापित की, जिसके अंतर्गत उन्होंने मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज तथा औरंगाबाद के मिलिंद कॉलेज की स्थापना की। डॉ. अंबेडकर की मृत्यु के पश्चात दलित साहित्य की बागडोर इन्हीं दो कॉलेजों के दलित युवकों ने संभाली। 'सिद्धार्थ साहित्य संघ' की स्थापना सन 1956 में की गई थी, जिसका नाम बाद में बदलकर 'महाराष्ट्र दलित साहित्य संघ' रखा गया। इसने दलित साहित्य को नई दिशा प्रदान की तथा दलित रचनाएं बहुत-से समाचारपत्रों व पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी। दलित रचनाकारों ने दलित जीवन की त्रासदी की वास्तविकता को चित्रित करना ही अपना लक्ष्य माना। मराठी ललित साहित्य केवल अभिजात्य वर्ग के मनोरंजन तथा कल्पना विलास को ही दर्शाता रहा, उसमें शोषित-वंचित वर्ग तथा त्रासदी भरे जीवन की कोई छाया भी नहीं होती थी। साहित्य पर सौंदर्य, कल्पना तथा रंग-विलास का आवरण चढ़ा रहा। दलितों की व्यथा तथा पीड़ा का इसमें कोई स्थान नहीं था तथा इस सबके लिए मुख्यधारा के वर्ग को जिम्मेदार माना गया। इसी संदर्भ में दलित लेखकों का पहला सम्मेलन 2 मार्च, 1958 को मोरबाग में दादर मुंबई के बंगाली हाई स्कूल में आयोजित किया गया, जिसके अंतर्गत 'दलित साहित्य की दृष्टि' पर एक निबंध प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसका उद्देश्य दलित लेखकों को प्रेरित करना था, जिससे वे दलित साहित्य का प्रचार-प्रसार गाँव-गाँव तक कर सकें। इस सम्मेलन में इस बात की मांग की गई कि मराठी साहित्य की एक धारा के रूप में दलित साहित्य को मान्यता देकर सम्मानित किया जाए। इसके अलावा विभिन्न साहित्य संघ और विश्वविद्यालयों, पाठ्यक्रमों में दलित साहित्य रचनाओं को भी सम्मिलित किया जाए। इस सम्मेलन से दलित साहित्य आंदोलन की सही तस्वीर सामने आयी। इस सम्मेलन में शामिल होने वाले प्रमुख लेखक और आलोचक सभी रिपब्लिकन पार्टी से संबंधित थे या उसके कार्यकर्त्ता थे। डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर के देहावसान के पश्चात रिपब्लिकन पार्टी का विभाजन हो गया, जिसके परिणामस्वरूप 'महाराष्ट्र दलित साहित्य संघ' भी दो भागों में बंट गया, जो 'महाराष्ट्र बौद्ध परिषद' तथा 'महाराष्ट्र बौद्ध साहित्य सभा' बने। इन दोनों साहित्यिक संस्थाओं का दलित साहित्य को प्रोत्साहन देने में बड़ा हाथ रहा। दलित जीवन को चित्रित करने वाले प्रमुख लेखक थे अण्णाभाऊ साठे, शंकरराव खरात और बाबूराव बागुल। बाबूराव बागुल की कहानियों में दलितों का दुख, पीड़ा, वेदना के साथ-साथ समाज में व्याप्त विषमता की भी पूरी झलक दिखाई देती थी। उनकी कविताओं का एक संकलन जिसका शीर्षक था 'विद्रोहाच्या कविता' इसी समय में प्रकाशित हुआ था। इस संकलन की प्रतियाँ प्रिंटिग प्रेस में न छपकर सायक्लोस्टाइल द्वारा छपी थी। दलितों ने जो अस्पृश्यता की आग को सहा, उसकी अभिव्यक्ति दलित साहित्य में देखने को मिली। 'बाबूराव बागुल' के 'जेंव्हा मी जात चोरली' (जब मैंने जाति छुपाई) नामक कहानी संग्रह ने मराठी साहित्य को पूरी तरह से झकझोर कर रख दिया। ये पहले लेखक थे जिन्होंने दलित जीवन की पीड़ा, विवशता व अपमान को इस प्रकार कहानी-कविता में उतारा था। मराठी समीक्षकों ने इस कहानी संग्रह को काफी सराहा था। इस समय तक औरंगाबाद शहर दलित साहित्य आंदोलन का केंद्र बन चुका था।

डॉ. अंबेडकर ने औरंगाबाद में मिलिंद महाविद्यालय की स्थापना की, जिसमें महाराष्ट्र के कोने-कोने से दलित विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। यहीं पर 'नागसेनवन' में स्थित 'मिलिंद महाविद्यालय' तथा 'औरंगाबाद' दलित साहित्य आंदोलन के मुख्य केंद्र बन गए। यह दलित साहित्य आंदोलन का केन्द्र बन चुका था, क्योंकि दलित युवक जो यहाँ पढ़ने आते थे, वे अपने साहित्य में दलित मन की व्यथा को शब्दों के सहारे से उतार देते थे। किंतु इसे प्रकाशित करने की समस्या थी। इसलिए सन 1967 में 'मिलिंद साहित्य सभा' की स्थापना की गई, जिसके अंतर्गत 'अस्मिता' नामक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया गया। विश्वभर में क्रांति के क्षेत्र में साहित्य की भूमिका प्रमुख रही है। लोगों ने साहित्य के माध्यम से जनता को प्रेरित किया है। रूस की क्रांति, बंगलादेश का मुक्ति संग्राम आदि इसके उदाहरण हैं।

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में भी साहित्य की भूमिका प्रमुख रही। साहित्य के महत्त्व को समझकर ही पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 'प्रगतिशील लेखक संघ' के इलाहाबाद अधिवेशन में एक भाषण में आने वाली क्रांति के लिए लेखकों का आह्वान किया। साहित्य लोगों के दिल में उतर कर आत्मा को झकझोर देता है। दलित साहित्य भी दलितों को समानता, स्वाधीनता तथा न्याय दिलाने का मार्ग बना रहा था। डॉ. अम्बेडकर ने इसके महत्त्व और भूमिका के विषय में बताया है। उन्होंने कहा कि जो जीवन-मूल्य और सांस्कृतिक मूल्यों का हनन हो रहा है, उनके लिए दलित साहित्यकारों को जागरूक हो जाना चाहिए। उनका कहना था कि अपने साहित्य की रोशनी

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

गाँवों तक फैलाओ, जहाँ अंधकार छाया हुआ है। डॉ. अंबेडकर ने साहित्य की क्रांतिकारी भूमिका को पहचाना तथा इसके लिए लेखक वर्ग को क्रांति का वाहक बनने के लिए प्रेरित किया। दलित साहित्य को प्रोत्साहन देने में त्रैमासिक पत्रिका 'अस्मितादर्श' का बड़ा हाथ रहा है। मार्क्सवादी लेखकों तथा समीक्षकों ने भी दलित साहित्य के विकास में अहम भूमिका निभाई। इस पत्रिका के माध्यम से दलित लेखकों को नया मंच मिला। इसमें लिखने वाले प्रमुख लेखक थे–बाबूराव बागुल, दया पवार, अर्जुन डांगले, आदि। 'अस्मितादर्श' ने साहित्यिक तथा सामाजिक दोनों दायित्वों का निर्वाह किया। दलित साहित्य के विकास में मार्क्सवादी लेखकों व समीक्षकों का भी काफी योगदान रहा है। इस साहित्यिक आंदोलन के प्रमुख केन्द्र नागपुर, मुंबई, औरंगाबाद और नासिक थे। 'महाराष्ट्र बौद्ध साहित्य सभा' द्वारा आयोजित सम्मेलन में दलित कविताओं के प्रथम संकलन 'आकार' का प्रकाशन हुआ था। मराठी दलित साहित्य को मराठी समीक्षकों ने बहुत सराहा, किंतु कुछ परंपरागत समीक्षकों ने इस साहित्यधारा का विरोध भी किया। उनका दृष्टिकोण पूर्वाग्रही होने के कारण उन्हें दलित साहित्य में मूल्यों की कमी लगी तथा वह उन्हें प्रचारात्मक लगने लगा। सन 1968 के पश्चात दलित लेखकों ने साहित्य आलोचना के जीवनवादी दृष्टिकोण को विकसित किया। इसी समय पर दलित लेखकों व कवियों के प्रयास से 'विद्रोह' नामक अनियतकालीन पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया गया। इसमें मुख्य रूप से दया पवार, केशव मेश्राम, नामदेव ढसाळ, उषाकांत रणधीर आदि कवियों की रचनाओं को शामिल किया गया। सन 1969 में दैनिक समाचारपत्र 'मराठवाड़ा' के दीपावली विशेषांक के उपलक्ष्य में दलित साहित्य पर परिचर्चा आयोजित की गई थी। इस परिचर्चा में डॉ. म.ना. वानखड़े, दया पवार, बाबूराव बागुल, आदि दलित रचनाकारों और समीक्षकों ने भाग लिया तथा इन सभी ने मराठी साहित्य परंपराओं को नकारा। इससे दलित साहित्य का विद्रोहात्मक रूप सामने आया।

सन 1969 में दलित साहित्य का दूसरा सम्मेलन 'महाड़' में हुआ। इसी स्थान से डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर ने चवदार जलाशय का जल छूकर दलित मुक्ति आंदोलन शुरू किया था। दलित साहित्य सम्मेलनों ने दलित साहित्यकारों में जोश भर दिया तथा उन्हें नई प्रेरणा दी। मराठी साहित्य समीक्षक, दलित साहित्य की चेतना को थोड़ा देर से समझ पाये। जिन लोगों को दलितों के जीवन की व्यथा और पीड़ा के विषय में नहीं पता था, वे इस साहित्य का मूल्याकंन सही ढंग से नहीं कर पाये। यदि समीक्षक दलित जीवन की गहराई को नहीं जानते हैं, तो वे दलित साहित्य की समीक्षा निष्पक्ष होकर नहीं कर सकते। इसके लिए आवश्यक है कि वे दलित जीवन के अनुभव से निकलें। दलित साहित्य आंदोलन दलित मुक्ति आंदोलन की एक कड़ी है। इसी चेतना के आगे शृंखला में हैं–दलित पैंथर आंदोलन।

दलित साहित्य आंदोलन में 'दलित पैंथर' की भूमिका

दलितों पर अत्याचार तथा तिरस्कार का वातावरण आजादी के बाद भी वैसा ही रहा, जैसा आजादी से पहले था। अपनी हीनता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए ही 'दलित पैंथर' संग्राम की शुरुआत हुई। इस संगठन से अनेक दलित लेखक भी जुड़े हुए थे। बेरोजगार दलित युवावर्ग एक ओर तो समाज में जाति-शोषण झेल रहा था, दूसरी ओर उसकी गरीबी व साधनहीनता ने उसे परविहीन पक्षी की भावना से घेर रखा था। गाँवों तथा गहरों में शिक्षित दलित युवकों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती जा रही थी। अपनी जाति के साथ हो रहे अन्याय ने उन्हें झकझोर दिया था।

सामाजिक अन्याय, अत्याचारों के साथ 'रिपब्लिकन पार्टी' का कुछ न करना युवा मन को दुखी किए जा रहा था। इसी समय पर मुबंई के सिद्धार्थ कॉलेज के छात्रावासों में रहने वाले दलित व गैर-दलित युवकों ने मिलकर प्रयास किया, जिससे 'युवक आघाड़ी' की स्थापना की गई, जिसमें कुछ प्रमुख दलित युवा रचनाकार भी शामिल थे। इसमें दया पवार, अर्जुन डांगळे, नामदेव ढसाळ, जैसे रचनाकार सम्मिलित थे। ये सभी अमरीका के निग्रो साहित्य और निग्रो क्रांतिकारी आंदोलन से परिचित थे और उसी से प्रेरित होकर इन्होंने 9 जुलाई, सन 1972 को 'दलित पैंथर' की स्थापना की। 'दलित पैंथर' नामक इस समूह ने अपना विरोध दर्शाने के लिए स्वतंत्रता दिवस पर काले झंडे लेकर मुंबई में एक बड़ा प्रदर्शन किया था। प्रसिद्ध समाजशास्त्री प्रो. मोईन शकीर ने 'दलित पैंथर' की उत्पत्ति का आधार दलित साहित्य को बताया है।

वर्ण-जाति-दास्य प्रथा के विरोध का इतिहास

समाज में ब्राह्मणवाद का बोलबाला था। ब्राह्मण को ईश्वर का दूत तथा शूद्र को तिरस्कृत बताया गया। इस वर्ण-व्यवस्था ने ब्राह्मण का जीवन तो हर प्रकार से सुरक्षित कर दिया, किंतु शूद्र के लिए समाज के सभी रास्तों पर प्रतिबंध लगा दिया। इस व्यवस्था का प्रभाव उत्पादन, व्यापार, वितरण तथा बाजार की प्रत्येक स्थिति पर था। ब्राह्मण वर्ग को समाज में बिना कुछ प्रयास करे सब-कुछ मिलता था, वह परजीवी की भाँति जीवनभर बिना परिश्रम किए धन-संपत्ति, भूमि ग्रहण, सम्मान, सुख-सुविधाएं सभी प्राप्त करता था। क्षत्रियों को देश की रक्षा का कार्य सौंपा गया था। वैश्य वर्ण का कार्य संपूर्ण व्यापार क्षेत्र को संभालना था और तथाकथितत शूद्र को तीनों वर्णों की सेवा का कार्य सौंपा गया था। शूद्र को ज्ञान प्राप्त करने का, धन कमाने का तथा उत्पादन करने आदि का कोई अधिकार नहीं था। इस वर्ग के पास अपनी दशा को सुधारने का कोई मार्ग नहीं था। शूद्र जन्म से ही दासत्व लेकर पैदा होता था।

भारतीय समाज के ऐतिहासिक विकास में समाज से वर्ण-व्यवस्था को दूर करने के प्रयासों ने इसे कुछ समय तक ढीला अवश्य किया। ब्राह्मणवादी-असमतावादी-विषमतावादी संस्कृति का विरोध श्रमण संस्कृति की ओर से किया गया। इस परंपरा में मुख्य रूप से भौतिकवादी, चार्वाक, लोकायत तथा बौद्ध चिंतकों की भूमिका मुख्य रही। बुद्ध दर्शन ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था को शोषणकारी तथा उत्पीड़क बताकर इसका भरपूर विरोध किया। बुद्ध धर्म ने

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

समतावादी विचार को महत्ता दी। उन्होंने समता, स्वाधीनता, न्याय तथा करुणा के जीवनदायी मूल्यों को स्थापित करके मनुष्य को सबसे ऊपर माना है।

बुद्ध धर्म अपने समतावादी विचार के कारण लगातार एक हजार वर्षों तक भारत व भारत के बाहर अनेक देशों में जीवंत रहा। बुद्ध दर्शन के प्रमुख सिद्ध सरहपाद, निर्गुण संत कबीर, रैदास, चोखा और नामदेव के साहित्य में बहुजन हित का चिंतन देखा जा सकता है। वर्णश्रेष्ठता को अतार्किक, अवैज्ञानिक बताते हुए कबीर ने कहा है 'गर्भवास मंह कुल नहिं जाती। ब्रह्म बिंद ते सब उत्पाती।' इन सभी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में दलित वर्ण की वेदना को उतारा है तथा साथ ही इस बात पर जोर दिया है कि सभी ईश्वर के बंदे हैं और सब एक समान हैं।

सामाजिक संरचना में दलित कौन?

समाज में वर्ण-व्यवस्था के अनुसार एक विशिष्ट जाति के लोगों को अस्पृश्य माना गया, जिन्हें जजमानी की परंपरा के अनुसार गाँव की सफाई, मरे हुए जानवरों को उठाना, मृत्यु की खबर पहुँचाना, गाँव की रखवाली करने का कार्य जरूरी बताया गया। धर्मशास्त्रों ने इसे जन्म के साथ अछूत माना। अस्पृश्यों को शिक्षा ग्रहण करना, धन कमाना, उत्पादन के अधिकार आदि से दूर रखा गया तथा समाज में घृणित माने जाने वाले कार्य उन्हें करने को विवश किया गया। उनके पास अपनी अजीविका कमाने के लिए यह मुख्य कार्य थे। चूंकि इन्हें अछूत माना जाता था, इसलिए मंदिरों में प्रवेश, जलस्रोत को छूना आदि उन्हें निषेध थे। अछूतों को विशिष्ट आवाज निकालकर अपने आने की सूचना देनी होती थी।

पेशवाओं ने सरकारी फरमान जारी कर दिये थे कि उनके थूक से जमीन अपवित्र न हो, इसलिए गले में एक मटकी थूकने के लिए, उनके पदचिह्न मिटते जाएं, इसलिए कमर में झाड़ू तथा उनके आने की सूचना मिलती रहे, इसलिए डंडे में घुंघरू लगे रहें। इन नियमों का पालन न करने पर प्राणदंड तक की सजा दी जाती थी। इनके रहने का स्थान या बस्ती हमेशा गाँव की दक्षिण दिशा में होती थी। इनके पानी लेने का स्थान भी निश्चित होता था, जो नीचे की ओर होता था। इन्हें परिश्रम के बदले में सालाना कुछ सेर अनाज तथा रात में प्रत्येक सवर्ण घर से बेगारी के काम के बदले में केवल बासी रोटी दी जाती थी। आर्थिक आय के किसी अन्य साधन की अनुमति इन्हें नहीं थी और न ही अधिकार था। ये खेतों में भूमिहीन मजदूरों की भाँति दिन-रात काम करते थे और फसल की कटाई और अनाज की सफाई के बाद अनाज की ढेरी से इन्हें दूर रहने के आदेश थे। यदि उनकी छाया अनाज की ढेरी पर पड़ जाये, तो उसे अपवित्र माना जाता था। दलितों को केवल मिट्टी में मिला अनाज उठाने की छूट थी। समाज के समस्त उच्च वर्ग के लोग दलितों को परिश्रम के बदले में थोड़ा-सा अनाज देकर उन पर अहसान जताते थे कि तुम हमारे कारण गुजर-बसर कर पा रहे हो।

स्वपरख अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. दलित कविता के विकास के पीछे कौन-से मुख्य कारण रहे हैं?

उत्तर—वर्षों की परतंत्रता के पश्चात भारत ने स्वतंत्रता प्राप्त की और अपने संविधान का निर्माण किया, किंतु भारत में एक वर्ग ऐसा भी था, जिसे अभी भी स्वतंत्रता नहीं मिल पाई थी। दलित वर्ग सदियों से गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, जो अंग्रेजी पराधीनता से भी अधिक भयानक थी। भारतीय समाज वर्ण-व्यवस्था में जकड़ा हुआ था, जिसमें चार वर्ण थे। सबसे उच्च वर्ण ब्राह्मण, उसके पश्चात क्षत्रिय, वैश्य और सबसे हीन व तुच्छ समझा जाने वाला वर्ग शूद्र वर्ण था। हर वर्ण के अपने कार्य भी निश्चित थे।

एक वर्ण दूसरे वर्ण के कार्यों में कोई हस्तक्षेप नहीं करता था। शुद्र यानि अछूतों को समाज में कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। उन्हें उच्च तीनों वर्ण की सेवा करनी होती थी। यहाँ तक कि शूद्र को पढ़ने का अधिकार भी नहीं था। धार्मिक स्थानों पर उनका प्रवेश वर्जित था। यह सदियों पुरानी प्रथा आज भी चली आ रही है।

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात जब अपना संविधान बनाया गया, तो उसमें इस अमानवीय प्रथा के लिए भी प्रावधान है। दलित जाति सदियों से समाज में तिरस्कार सहती आ रही थी। उनमें समाज का विरोध करने की ताकत नहीं थी। कभी अपने अधिकारों के प्रति सजग होने का साहस भी उन्होंने नहीं किया। उनकी पीड़ा, वेदना, उनकी कुंठा को कुछ दलित कवियों ने अपनी कविता में उतार कर प्रस्तुत किया। दलितों को शिक्षा ग्रहण करने का भी कोई अधिकार नहीं था, इसीलिए दलित वर्ग अपने जीवन को अभिशाप मानकर जीता रहा। दलितों ने कभी स्वयं को ऊपर उठाने के प्रयास नहीं किये। किंतु डॉ. भीमराव अंबेडकर ने शिक्षा के महत्त्व को समझकर सन 1945 में मुंबई में पीपुल्स एज्युकेशन सोसाइटी की स्थापना की। इसके अंतर्गत ही इन्होंने मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज और औरंगाबाद के मिलिंद कॉलेज की भी स्थापना की।

डॉ. अंबेडकर एक समतावादी समाज का सपना देखते थे। उन्होंने दलितों को अपना जीवन सुधारने में बहुत सहायता की। उनके प्रयासों से 1956 में 'सिद्धार्थ साहित्य संघ' साहित्य संस्था की स्थापना हुई, जिसका नाम बाद में 'महाराष्ट्र दलित साहित्य संघ' रखा गया। दलित साहित्य में दलित जीवन की सारी व्यथा को उतारकर रखा गया, ताकि पढ़ने वाला उनके जीवन के दर्द को महसूस कर सके।

दलित साहित्य में सौंदर्य और मधुरता का कोई स्थान नहीं है, बल्कि वह कड़वाहट और कटुता से भरा है, जो उन्होंने अपने जीवन में सही है। दलित साहित्यकारों ने अपनी बेड़ियां तोड़ने के लिए तलवार नहीं, कलम का सहारा लिया और अपनी सारी कुंठा शब्दों के माध्यम से साहित्य में उतार दी। दलित साहित्य का जन्म एक विद्रोह के कारण हुआ, उस अमानवीय प्रथा के कारण हुआ, जो समाज में सदियों से चली आ रही है।

www.neerajbooks.com